अच्छे कर्म ही दूसरों से अलग और मूल्यवान बनाते है।
– अज्ञात

बहुत बड़ा सिरदर्द

ध्यान रहे, मजदूर शब्द से एकबारगी जिन ईंट ढोते या बोझा उठाते श्रमिकों की तस्वीर मन में उभरती है, उससे इस वर्कफोर्स के कौशल का अंदाजा नहीं मिलता। औद्योगिक काम संभालने वाले ज्यादातर मजदूर किसी खास काम में माहिर होते हैं।

मोहन भट्ट।

असम के तिनसुकिया जिले के एक तेल कुएं में लगी आग उस पूरे इलाके के लिए बहुत बड़ा सिरदर्द साबित हो रही है। आग इतनी भयंकर है कि दस किलोमीटर दूर से इसकी लपटें देखी जा सकती हैं। विशाल हरा–भरा इलाका काले धुएं से भर गया है। विशेषज्ञों के मुताबिक इस पर काबू पाने में कम से कम चार हफ्ते लगेंगे। याद रहे, यह कोई आकस्मिक हादसा नहीं है।

27 मई को इसी तेल कुएं में एक विस्फोट हुआ था जिसके बाद से वहां गैस लीक हो रही थी। इससे न सिर्फ यहां के लोगों का बल्कि वन्य जीवों का भी जीना हराम हो गया था। आसमान से तेल की बारिश सी हो रही थी, जिससे जल स्रोत प्रदूषित हो रहे थे। मरी डॉल्फिनें नदी में उतराई दिख रही थीं।

अब 15 दिन बाद इसकी परिणति समूचा तेल कुआं ही धधक उठने के रूप में हुई है। आगे कम से कम एक महीने और जलने वाली यह आग यहां के पर्यावरण को कितना नुकसान पहुंचाएगी, कहा नहीं जा सकता। मगर हाल के दिनों में जनमानस को उद्वेलित करने वाला यह कोई अकेला औद्योगिक हादसा नहीं है। बमुश्किल हफ्ता भर पहले गुजरात के भरूच शहर में एक केमिकल फैक्ट्री का बॉयलर फट जाने से आठ मजदूर मारे गए और 57 लोग बुरी तरह घायल हुए। उससे पहले मई में ही विशाखापत्तनम की एक पॉलिमर कंपनी से रिसी जहरीली गैस के असर में जिस तरह लोग बेहोश होते, लुढ़कते दिखने लगे, उसे भुलाना मुश्किल है।

जांच–पड़ताल में इन तमाम हादसों के पीछे अलग–अलग वजहें खोजी जा सकती हैं, लेकिन एक बात इनमें साझा है कि ये हादसे ऐसे समय में हुए जब देश कोरोना वायरस और लॉकडाउन का सामना कर रहा है।

तमाम कल–कारखाने पहले लॉकडाउन की वजह से तुरत–फुरत बंद करने पड़े, फिर मजदूरों के गांव चले जाने से आधे–तिहाई स्टाफ के साथ उन्हें खोलना पड़ रहा है। ध्यान रहे, मजदूर शब्द से एकबारगी जिन ईंट ढोते या बोझा उठाते श्रमिकों की तस्वीर मन में उभरती है, उससे इस वर्कफोर्स के कौशल का अंदाजा नहीं मिलता। औद्योगिक काम संभालने वाले ज्यादातर मजदूर किसी खास काम में माहिर होते हैं। उन्हें तत्काल रिप्लेस करना किसी भी मैनेजमेंट के बूते से बाहर है। ताजा ट्रेंड कंपनियों में कम से कम कर्मचारी रखने का है।

नतीजा यह कि कोरोना और लॉकडाउन के चलते मजदूरों के पलायन से बने शून्य को भरना सारे ही उद्यमों के प्रबंधन के लिए लोहे के चने चबाने जैसा है। सारे काम इस जटिलता का आकलन करने के बाद ही शुरू किए जाने चाहिए, वरना आने वाले दिनों में कुछ और दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं का साक्षी होना पड़ सकता है। कुछ दिन पहले मुंबई के चेंबूर इलाके में गैस लीक की खबरों से लोगों में फैला आतंक इसी आशंका की एक बानगी है।

वक्त का तकाजा है कि कंपनियों का प्रबंधन और सरकारें हर तरह के सुरक्षा उपाय सुनिश्चित करने के साथ ही मजदूरों को गांव से वापस लाने की गंभीर कोशिशें शुरू करें।

जागरूक बनें

धर्म-दर्शन

अशोक वोहरा। हम सब में बुद्ध का दिमाग है। हर संवेदनशील व्यक्ति में वह है। यह मस्तिष्क हमेशा उपस्थित होता है, हमेशा साफ होता है और हमेशा निपुण होता है। निपुण अस्तित्व की स्वाभाविक अभिव्यक्ति स्पष्टता होती है। परेशानी तब होती है जब मस्तिष्क गर्व, अज्ञानता, लालच, ईर्ष्या और चाहत के पांच जहरों से उत्पन्न भ्रम, आक्रामक एवं अभद्र विचारों से भरा होता है। यदि हम अपने सभी कार्य इस कार्मिक मस्तिष्क से करते हैं, तो यह कई बार पीड़ा देता है। यदि हम कोशिश करें और मूल एवं कार्मिक मस्तिष्क के बीच अंतर समझते हैं, तो हम स्पष्टता से व्यथित मन को देख पाएंगे।

जैसे ही शराब हमारे रक्त में प्रवेश करती है, वह अपने साथ भ्रान्ति लाती है।

संपादकीय

लोगों का बिगुल

बिहार है तो सिर्फ ऐसे सवालों पर चुनाव संभव नहीं है। आज भले ही कोरोना ने मुद्दे ढक दिए हैं, पर यह तय मानिए कि चुनाव हुए तो वे मुद्दे भी आएंगे ही। ये मुद्दे जाति–धर्म की राजनीति के हैं, ये नीतीश कुमार के सुशासनध्लालू यादव के कुशासन के हैं, मोदी और शाह के अच्छे दिन के हैं, नोटबंदी और लॉकडाउन जैसे फैसले लेने के विवेक के हैं। भले नीतीश कुमार का विकल्प न दिख रहा हो, पर लोग उनसे बुरी तरह ऊबे हैं, लालू परिवार से ऊबे हैं, सामाजिक न्याय के नाम पर हुई बांझ क्रांति से ऊबे हैं। ये सवाल कोरोना के पहले उठने लगे थे। अभी शाह जी का बिगुल बजा है, जरा लोगों का भी बिगुल बजने दीजिए। अभी वे कोरोना में फंसे हैं। विपक्षी गठबंधन का क्या स्वरूप होगा, कौन नेता होगा और मुद्दे क्या होंगे, जैसे सवाल तो हैं ही, लोकसभा चुनाव वाली गलतियां (घटिया उम्मीदवार, सिर्फ जातिध्मजहब का हिसाब और टिकटों की खुलेआम बिक्री) नहीं दोहराई जाएंगी, इसका भरोसा दिलाने वाले नेतृत्व का भी अभाव है। विपक्ष के नेता और खुद को मुख्यमंत्री पद का दावेदार बताने वाले तेजस्वी यादव ने अभी तक अपनी नेतृत्व क्षमता नहीं दिखाई है। उनको अभी बहुत कुछ करना और सीखना है। कांग्रेस के हिसाब से तो लगता ही नहीं कि बिहार में चुनाव होने हैं। और साधन से एकदम कमजोर तथा कुछ ही हिस्सों में प्रभावी सीपीआई (एमएल) को छोड दें तो यह किसी को भी एहसास नहीं है कि बिहार में दोनों बड़ी कम्युनिस्ट पार्टियों का अभी हाल तक बड़ा आधार था। पर न तो बिहार में राजनीतिक मुद्दों का अभाव है, न मुल्क में। शाह जी अगर उलटी गंगा बहाते हुए कोरोना पर विपक्ष से 'क्या किया' जैसे सवाल पूछ रहे हैं तो पूछें, लोगों को तो इस सवाल पर नरेंद्र मोदी और नीतीश कुमार से ही सवाल पूछने हैं।

खुद शाह भी बिहार के बाद ओडिशा और बंगाल में वर्चुअल रैली कर चुके हैं। दूसरी वजह है बिहार विधानसभा चुनाव की राजनीतिक अहमियत।

न रहे संदेह

अरविन्द मोहन।

कोरोना महामारी के प्रचंड रूप पकड़ने के दौर में चुनावी मुहिम छेड़ने के नैतिक सवाल को भी छोड़ा नहीं जा सकता, पर केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह द्वारा बिहार विधानसभा चुनाव की झमाझम शुरुआत के साथ जो राजनीतिक और प्रशासनिक गतिविधियां शुरू हो गई हैं, उनकी अनदेखी मुश्किल है। इसकी दो प्रमुख वजहें हैं। पहली तो सरकारों के महामारी की तरफ ध्यान देने के बजाय चुनाव की तैयारी में लगना है। केंद्र का तो खास पता नहीं, पर खबर है कि बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने कोरोना से जुड़ी नियमित समीक्षा वाली अपनी शाम की बैठक स्थगित कर दी है। खुद शाह भी बिहार के बाद ओडिशा और बंगाल में वर्चुअल रैली कर चुके हैं। दूसरी वजह है बिहार विधानसभा चुनाव की राजनीतिक अहमियत। पिछले काफी समय से बीजेपी का विधानसभा चुनावों का प्रदर्शन लोकसभा के मुकाबले काफी खराब रहा है। ऐसे में पक्ष और प्रतिपक्ष चुनावी लड़ाई में उतरें और शुरुआत इतना पहले हो तो सबका ध्यान बिहार पर जाएगा ही।

लेकिन इन सबसे बढ़कर बीजेपी की रणनीति चौंकाती है। बिहार में वह आज भीअकेले लड़ने को तैयार नहीं है, नीतीश कुमार के सहारे ही

राज्य पर अपनी पकड़ बनाए रखना चाहती है। पिछले चुनाव के तत्काल बाद पाला बदलकर बीजेपी की तरफ आना अगर नीतीश के लिए एक झेंप का विषय था तो बीजेपी के लिए नीतीश को गोद लेना दोहरी पराजय स्वीकार करना था। चुनाव में हुई पिटाई के बाद नैतिक हार। पर इस बार भी शाह जी ने जो काम सबसे पहले किया, वह था नीतीश कुमार के बारे में उठ रहे या एनडीए के एकजुट रहने पर जाहिर किए जा रहे शक को दूर करना।

एलजेपी के चिराग पासवान और बीजेपी के कई महत्वाकांक्षी नेताओं ने जो बयान और सिगनल दिए थे, उनसे ही यह संदेह पैदा हुआ था। अगर नेतृत्व का सवाल इतनी शुरुआत से स्पष्ट है तो तय मानिए कि बीजेपी नेतृत्व सीटों के तालमेल और बंटवारे के सवाल को ज्यादा बढ़ने नहीं देगा।

अब कोई यह सवाल उठाना चाहे तो उठाए कि जो अमित शाह पिछली बार बिहार में बुरी तरह पिट चुके हैं, बीजेपी उन्हें ही फिर क्यों आगे कर रही है। पिछली बार बीच चुनाव में बीजेपी को पूरी रणनीति बदलनी पड़ी थी और शाह के पाकिस्तान में पटाखे छूटने जैसे बयानों से भी बीजेपी को नुकसान हुआ था। दूसरे, बीजेपी अध्यक्ष जेपी नड्डा के लिए बिहार अपने घर जैसा ही है, सो उन्हें खुद आगे आना चाहिए था। लेकिन शाह की तरह का संगठनकर्ता बीजेपी में ही नहीं, बिहार में भी दूसरा नहीं दिखता। उन्होंने शुरू से ही सभी 243 विधानसभा सीटों और 72,000 बूथों की तैयारी शुरू करा दी थी। लोग भले चीनी बायकॉट के आह्वान बीच चीन निर्मित एलईडी सेट लगवाने का सवाल उठाएं, पर इस कोरोना और लॉकडाउन के समय में हर जगह यह इंतजाम करके शो कर लेना कम बड़ी बात नहीं है।

तो एक तरफ सारे साधनों से संपन्न कार्यकर्ताओं की फौज, कुशल मीडिया प्रबंधन और सीटों के बंटवारे में कोई दिक्कत न आने देने को तत्पर नेतृत्व है, दूसरी तरफ बंटा, बिखरा, आपसी फूट और अनिश्चय का शिकार, संसाधनहीन और राजनीतिक रूप से 'गायब' पक्ष है।

अष्टयोग-5069

1	5			2		6
	30	7	31		34	
6	3		4		7	1
	37	6	33	6	29	
7	5			1		4
	30		32	7	34	
4	2	1		3	5	

प्रस्तुत खेल सुडोकू व जोड़ की पद्धति का मिश्रण है. खड़ी व आड़ी पंक्तियों में 1से 7 तक के अंक लिखने अनिवार्य हैं. गहरे काले वर्ग में लिखी संख्या चारों और के 8 वर्गों की संख्या का कुल योग होगी. सीधी अथवा आड़ी पंक्तियों में 1 से 7 तक के अंक होना अनिवार्य है.

अष्टयोग 5068 का हल

6	5	4	3	2	7	1
2	34	7	30	4	28	2
7	2	1	6	3	5	4
3	31	6	32	6	33	5
4	5	3	6	1	2	7
5	28	5	33	7	38	3
1	3	2	4	5	7	6

Jagrutidaur.com, Bangalore

अपना ब्लॉग

बिना सत्ता में बैठी सरकार

मोहन। बिना किसी लाग लपेट के कहें तो इन रैलियों में ज्यादातर वही लोग थे जो आज सड़कों पर पैदल चल रहे हैं, ट्रकों पर लटक कर जा रहे हैं, ट्रेन के लिए स्टेशनों के बाहर हजारों की संख्या में पहुंच रहे हैं। लेकिन क्या आपने इन रैलियो में आए किसी को भी यह कहते हुए सुना था कि 'भैया, 200–300 किमी पैदल चलकर किसी तरह से रैली में पहुंचे हैं। रास्ते में बहुते दिक्कत हुई। पूरे रास्ते भूखे रहना पड़ा।' शायद नहीं सुना होगा क्योंकि इन रैलियों में इन्हें लाने के लिए पार्टियां गाड़ियों से लेकर खाने–पीने तक की सारी व्यवस्था बिना किसी झिझक के, बिना सत्ता में बैठी सरकार का मुंह देखे, अपने दम पर करती हैं। यह तो आप भी जानते हैं कि सीधे तौर पर कोई पार्टी नहीं मानेगी लेकिन पार्टी के कोर मेंबर को छोड़कर इन रैलियों में आने वाले ज्यादातर लोगों को दिहाड़ी के हिसाब से पैसे भी दिए जाते हैं। ऐसा इसलिए कहा रहा हूं क्योंकि रैलियों के बाद एकाध विडियो ऐसे मिल जाते हैं।